उपसंहार

सन्त कबीर साहब महिमा मण्डित पुरुष थे। उनके बीजक ग्रन्थ से सभी परिचित हैं किन्तु उनके अमूल्य ग्रन्थ अनुरागसागर से बहुत कम लोग परिचित हैं। कबीर साहब का विधवा ब्राह्मणी से जन्म, नीरू–नीमा द्वारा पालन–पोषण आदि वृत्तान्त जो किंदवन्ती रूप में हैं, वे सभी अनुराग सागर में विस्तृत रूप में विद्यमान हैं। अनुराग सागर चेतना का महासागर है। इसमें चारों युगों में निज (कबीर) चेतना के विविध रूपों – सत्यसुकृत्, मुनीन्द्र, करुणामय एवं कबीर का जीव–चेतना की जागृति एवं चेतना के निज भण्डार तक ले जाने रूप जीव उपकार का विविध रोचक घटनाओं के द्वारा वर्णन किया गया है। सद्गुरु में दृढ़ प्रीति एवं प्रतीति रखने वाला अनुरागी भक्त ही इस अनुराग सागर का अधिकारी है। इस शोध पुस्तक के प्रथम अध्याय में अनुराग सागर की प्रामाणिकता, प्रतिपाद्य एवं अनुराग सागर के अधिकारी आदि विषयों पर चर्चा की गई।

द्वितीय अध्याय में चेतना वर्णन के साथ धर्म एवं चेतना के अन्तःसम्बन्ध को प्रमुख रूप से दर्शाया गया है। चेतना मानव मस्तिष्क में प्रवहमान वह शक्ति है जो मनुष्य को निरन्तर चैतन्य प्रदान करती है। मनोविज्ञान, धर्म, दर्शन एवं अध्यात्म के क्षेत्र में चेतना की विविध परिभाषाएं दी जाती रहीं है। वैदिक तथा अवैदिक धर्मसंहिताओं में सदाचार तथा आत्म चैतन्य पर बल दिया जाता रहा है। वेदों और उपनिषदों में अव्याकृत ब्रह्म या सुन्न देश तक की चेतना का वर्णन है। सन्त कवियों में सर्वप्रथम कबीर साहब ने ही सत्तलोक (चौथे लोक) का कथन किया है। इसके बाद संत गुरुनानक देव, संत तुलसी साहब, पलटू साहब आदि ने सत्तलोक तक का गुणगान किया।

धर्म एक सर्वोपरि चैतन्य निर्देश है। विश्व के सभी धर्मों का सार है – मानव मंगल एवं आत्माभ्युदय अथवा आत्मचेतना की जागृति एवं निःश्रेयस् प्राप्ति। सभी धर्मों के मूल में चेतना या चैतन्यकारक तत्त्व विद्यमान हैं। हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, जैन, बौद्ध एवं सन्तमत सभी धर्म अपार, अनन्त एवं विभु चेतना के विविध रूप हैं। मानव की अन्तश्चेतना का अभ्युत्थान धर्म द्वारा ही सम्भव है। धर्म में समाज को धारण करने की शक्ति है तथा समाज के लिये भी यह धर्म धारण करने योग्य है।

इतिहास एवं विकास की दृष्टि से चेतना को प्रारम्भ से ही दार्शनिक दृष्टि एवं प्रश्नों से जोड़कर देखा गया। दर्शन से मनोविज्ञान एवं मनोविज्ञान से विज्ञान तक की यात्रा में चेतना के विभिन्न रूप, प्रकार तथा अवस्थाओं के रूप में आधुनिक भाववाद, अस्तित्ववाद एवं विकासवाद में चेतना का नया अध्ययन उभर कर सामने आया। चेतना सतस्वरूप है। यह विविध रूप जीवन और जगत् एक नियात्मक चेतन तत्त्व का ही कार्य है। चेतना का ज्ञान, अन्तः निरीक्षण द्वारा सम्भव है। पारमार्थिक दृष्टि से चेतन तत्त्व ही स्फोट है। वैयाकरणों का स्फोट ही वैज्ञानिकों का बिग–बैंग है।

इस जगत् में सभी जीवों का उत्स एक ही है। स्फोट के परिणाम स्वरूप जो चेतना उत्पन्न हुई उसी से उद्‌भिज, स्वेदज अण्डज और जरायुज यह चतुर्विध सृष्टि रूपायित हुई। सभी धर्म एक ही प्रकार की चेतना के विविध रूप हैं। चेतना एक है और धर्म अनेक। यही है धर्म और चेतना का अन्तःसम्बन्ध। धर्म की प्रतिष्ठा, दर्शन शास्त्र के द्वारा सुचिन्तित एवं आध्यात्मिक चेतन तथ्यों पर अवलम्बित है। चेतना की नींव पर ही धर्म का भव्य एवं व्यावहारिक प्रासाद खड़ा होता है। दुःख–निवृत्ति की खोज से धर्मोदय होता है और दुःख की आत्यन्तिक निवृत्ति का एकमात्र उपाय परम चेतन तत्त्व में लय है। आर्यावर्त में प्रारम्भ से ही आध्यात्मिक चेतना और धर्म का सुमधुर सामंजस्य रहा इसीलिये धर्म स्वयं को तर्कहीन विचारों एवं निरर्थक आस्थाओं एवं विश्वासों से बचा सका। वस्तुतः परमात्मदर्शन, परमेश्वर दर्शन, ब्रह्म लाभ या आत्म चेतना को परम चेतना में लय कर देना ही उन्नत दर्शन है। इस प्रकार चेतना धर्म की परकाष्ठा है।

पाश्चात्य धर्म; दार्शनिक चेतना का पूर्णतः साधक नहीं कहा जा सकता। वहाँ पर विशुद्ध तार्किक दृष्टि से विवेचन करने वाले विद्वानों को पादरियों ने शूली पर चढ़ा दिया। भारतवर्ष में धर्म और चेतना का गहन सम्बन्ध है। जगत् के समस्त पदार्थों में विद्यमान प्रियतम वस्तु यही आत्मा है। इस विशाल वृत्त स्थानीय जगत् का केन्द्र भी यही आत्मा है। केन्द्र निश्चित है परन्तु परिधि अनन्त और असीम है। इसी आत्मा का साक्षात्‌कार मोक्ष या परमचैतन्य में लय है।

कवि भर्तृहरि ने नीतिशतक काव्य में स्वानुभूतिपरक चेतना को भगवान् के अस्तित्व का एक मात्र श्रेष्ठ प्रमाण बताया है। सन्त तुलसी साहब का कथन है कि ब्रह्म तो शरीर में ही है, उसे बाहर ढूँढने से क्या लाभ।

भारतीय धर्म और दर्शन के प्राण वेदों में ही सर्वप्रथम सर्वव्यापी, सर्वात्मक चेतन ब्रह्म सत्ता का निरूपण किया गया है। ऐतरेय ब्राह्मण ने स्पष्ट शब्दों में प्रतिपादित किया है कि एक ही महती सत्ता की उपासना ऋग्वेदी उक्थ रूप में, यजुर्वेदी (धर्म को) याज्ञिक अग्नि रूप में तथा सामवेदी महाव्रत याग में (उसी की) उपासना किया करते है।

स्मृतियों में नित्य, नैमित्तिक, काम्य और आपद्धर्म के रूप में धर्म का चार रूपों में कर्त्तव्याधारित विभाजन किया है। मनु ने आत्मज्ञान या आत्मचेतना को परम धर्म कहा है। धर्म के दो रूप हैं – सिद्ध एवं साध्य। महर्षि वाल्मीकि साक्षात् तपोमूर्ति थे। वाल्मीकि के राम साक्षात् धर्म के स्वरूप या मूर्त रूप है वे "एषः विग्रहवान् धर्मः, रामो विग्रहवान् धर्मः आदि वाक्य बार–बार लिखते हैं। सिद्ध धर्म रूप परमात्मा अथवा परम चैतन्य तत्त्व ही इस जगत् का आधार है। सिद्ध धर्म रूप परमात्मा की प्राप्ति या उसके साक्षात्कार के लिए साक्षात् अथवा परम्परया जो मनुष्यों के प्रयत्नसाध्य, शास्त्रोक्त और प्रवृत्ति–निवृत्ति एवं प्रतिनियत उपाय या साधन हैं उन सत्कर्मों अथवा उनके अनुष्ठान से उत्पन्न होने वाले अपूर्व (पुण्य) को साध्य धर्म कहते हैं। महाभारत (गीता) में अर्जुन श्रीकृष्ण से कहते है कि यदि तुम साध्य धर्म का विधिवत् पालन नहीं कर सकते हो तो मेरी अर्थात सिद्ध धर्म की शरण में आ जाओ – सर्व धर्मान् परित्यज्य मामेकं शरण ब्रज।

दर्शन शास्त्र का उद्देश्य क्लेश बहुल प्रपंच से दुःखों की आत्यन्तिक निवृत्ति तथा परम चैतन्यानन्द की उपलब्धि है अतः इसकी विशेषता साधना में है। सभी दर्शनों की साधना में उस चेतना के वैविध्य का कथन है।

जैन और बौद्ध धर्म हमारी प्राचीन भारतीय श्रमण संस्कृति के प्रतिफल हैं। जैन धर्म में चेतना के ज्ञान हेतु साध्य, साधक और साधन तीनों का कथन किया जाता है। महात्मा बुद्ध ने संज्ञा या चेतना को ही चित्त, मन या विज्ञान माना। यह चित्त स्वभावतः शुद्ध और मल रहित है किन्तु इसी के अन्तर्गत यह मूल बीज भी वर्तमान है जिससे भव और निर्वाण दोनों का विस्फुरण हुआ इसीलिये जिनके बुद्ध हो जाने से और बन्धन मुक्त होने से परम मोक्ष का लाभ होता है।

सन्तमत में लोक मंगल की भावना से जीवन को संयमित एवं मर्यादित करते हुए जन–जीवन को सद् विचारों एवं लोक कल्याण के लिये प्रवृत्त किया गया। महामानव (Superman) ही सन्त की गरिमा को धारण करते है। सन्तों की विशाल परम्परा ने विविध धर्मों के आडम्बर युक्त रूप का खण्डन कर एक ही चेतन सत्ता का कथन किया। उन्होंने धार्मिक पाखण्ड की अपेक्षा एक परम चैतन्य शक्ति, जो इस सृष्टि का मूल है तथा सभी में व्याप्त है, उसी की उपासना पर बल दिया। इस हेतु उन्होंने वर्ग भेद एवं जातिभेद का खण्डन किया।

वस्तुतः धर्म नित्य चेतन, सर्वदा स्थाई और देशकाल की सीमा का अतिक्रमण करने वाला तत्त्व है। सभी धर्मों का एक मात्र लक्ष्य अपने–अपने धर्माचार्यों की सनातन परम्परा से प्रवर्तित धर्म साधनों द्वारा साध्य – एक मात्र विभु, व्यापक, दिव्य, अखण्ड और अनामी चेतन सत्ता की उपलब्धि एवं उसमें लय करना है।

तृतीय अध्याय – सृष्टि पूर्व में चेतना एवं सृष्टि उत्पत्ति के विषय में अनुराग सागर में कहा गया है कि सृष्टि पूर्व में पृथिवी, पाताल तथा आकाशादि कुछ भी नहीं था। तब काल और माया भी नहीं थे। देवी–देवता तथा वेद–शास्त्र पुराणादि भी नहीं थे। ये सब उसी प्रकार थे जिस प्रकार एक बीज के अन्दर बहुत बड़ा वटवृक्ष रहता है। सृष्टि पूर्व में परम पुरुष सुन्न समाधि में लीन थे। सर्वप्रथम जब उस परम शक्ति में यह इच्छा जागृत हुई कि सृष्टि की रचना की जाय तब उस परम शक्ति से एक शब्द प्रकट हुआ जिससे समस्त लोकों की रचना हुई। आदि चेतन शक्ति के गुप्त (Potential) और प्रकट (Kinetic) ये दो रूप हैं।

धर्मदास यह अचरजबानी। गुप्त प्रगट चीन्हे सो ज्ञानी।।

चेतना के भण्डार सतपुरुष से सर्वप्रथम शब्द की रचना हुई। उस शब्द से ही सारी सृष्टि की रचना हुई अर्थात विविध लोकों और द्वीपों की रचना शब्द से हुई। शब्द से एक द्वीप रचा गया जिसे पुहुप द्वीप या पुष्प द्वीप कहा गया। इस पुष्पों के आधिक्य वाले पुष्प द्वीप में पुरुष ने चार कली वाले सिंहासन पर बैठकर विश्राम किया तदनन्तर सतपुरुष ने अपनी कला धारण की। जैसे ही सतपुरुष ने अपनी कला धारण की, चारों ओर सुगन्ध फैल गई। यह सुगन्ध अतुलनीय थी।

पुहुप द्वीप की रचना के बाद सतपुरुष ने अट्ठासी द्वीपों की रचना की। तदनन्तर षोडश बार शब्दोच्चारण के साथ पुरुष के षोडश पुत्रों का जन्म हुआ। इन द्वीपों में विराजमान षोडश अंशों की शोभा और कला अनन्त है। यहाँ अवर्णनीय सुख और आनन्द है। षोडश द्वीपों में सत्तपुरुष के प्रकाश से ही उजाला है। सत्तपुरुष के एक रोम का प्रकाश करोड़ों सूरज और करोड़ों चन्द्रमा से भी अधिक है। उस सत्तलोक, सतपुर या सचखण्ड में हंस जीव परम चैतन्य पुरुष के दर्शन से सुधापान करते हैं एवं सुगन्ध से अघाये रहते हैं।

ये सोलह सुत अपने–अपने द्वीपों में विराजमान थे। काल निरंजन ने अपने द्वीप में एक पैर से खड़े होकर पुरुष की भक्ति करना आरम्भ कर दी। उसने सत्तर युग सतपुरुष की भक्ति की। तब पुरुष ने पूछा तुम क्या चाहते हो। काल–निरंजन ने उत्तर दिया। मेरे रहने के लिए यह स्थान बहुत कम है। तब पुरुष ने उसे मानसरोवर द्वीप प्रदान किया। मानसरोवर में पुनः निरंजन ने सत्तर युग तक भक्ति की। पुनः पुरुष ने सहज भक्त के द्वारा इस तपस्या का कारण जानना चाहा। तब उसने सहज भक्त से कहा कि वह बिल्कुल स्वतन्त्र देश की इच्छा करता है जहाँ किसी का दख़ल न हो। तब पुरुष ने उसे सुन्न देश अर्थात त्रिकुटी तक का अधिकार दिया और आकाश, मर्त्य तथा पाताल लोक उसके अधिकार में दे दिये किन्तु निरंजन के पास सृष्टि रचना की सामग्री नहीं थी। कूर्म भक्त से उन्होंने सृष्टि रचना की सामग्री प्राप्त की। पुनः निरंजन सोचने लगा कि राज्य किस पर किया जाय। अतः उसने पुनः एक पैर पर खड़े होकर चोंसठ युग तक भक्ति की। तब पुरुष ने मौज से एक कन्या अष्टांगी बनाई और उसे निरंजन के साथ मिलकर सृष्टि रचना का आदेश किया। पुरुष ने अपना अंश अर्थात जीवों का भण्डार सोहम् काल को सोंप दिया। अष्टंगी से ब्रह्मा, विष्णु और महेश पैदा हुए। काल ने भवानी से कहा – सृष्टि रचना की समस्त सामग्री–आत्मा या रूहों का भण्डार तुम्हें दे दिया है। तीन पुत्र भी तुम्हें दे दिये, इन तीनों पुत्रों के साथ तुम राज्य करो। स्वयं का भेद किसी बालक को न बताने का कहकर काल स्वयं पुरुष की भक्ति में लीन हो गया। उसने यह भी कहा कि जब कोई मुझे ही नहीं खोज पायेगा तो सत्तपुरुष को कैसे खोजेगा। निरंजन ने भवानी से यह भी कहा कि जब तीनों पुत्र बड़े हो जायें तो उन्हें समुद्र मन्थन के लिए भेज देना। तीन बार समुद्र मन्थन हुआ।

चतुर्विध सृष्टि चाहे वह चल हो या अचल चेतना सम्पन्न है। काल कला से उद्भिज, स्वेदज, अण्डज एवं जरायुज यह चार प्रकार की सृष्टि हुई। कबीर साहब ने जेरज और पिण्डज को पृथक् कर इसके पाँच भेद माने है। प्रत्येक प्रकार में चेतना की मात्रा पृथक् है। स्थावर सृष्टि में एक तत्त्व जल एवं मृदा की चेतना गुप्त रूप में रहती है। स्वेदज में अग्नि एवं वायु तत्त्वों की चेतना गुप्त रूप में रहती है। अण्डज खान में तीन तत्त्व – जल, अग्नि और वायु की चेतना गुप्त रूप में रहती है। पिण्डज जैसे चौपाये पशु आदि में जल, मृदा, अग्नि और वायु की चेतना तथा जेरज या मनुष्य में पाँचों तत्त्वों की चेतना तथा त्रिगुणों की चेतना रहती है अतः वह सर्वोत्तम है।

चौरासी लाख योनियों में नौ लाख प्रकार के जल के जीव है, चौदह लाख के प्रकार के पक्षी, सत्ताईस लाख प्रकार के कीड़े–मकोड़े तथा तीस लाख प्रकार की वनस्पति है। चार लाख प्रकार की मनुष्य योनि है जिसमें मनुष्य, यक्ष, किन्नर, गन्धर्व आदि हैं।

इस प्रकार सृष्टि रचना कर निरंजन ने अपनी श्वाँसों से वेदों की रचना कर अनेक मत–मतान्तर फैला दिये जिससे जीव इनमें उलझा रहे एवं काल तथा माया के चक्र से बाहर न आने पाये अतः सतपुरुष को दया आई तब उन्होंने अपने पुत्र ज्ञानी जी से जीवों को काल–जाल से छुड़ाकर लाने को कहा।

चतुर्थ अध्याय में चारों युगों में निज चेतना का कथन है। सत्तपुरुष की आज्ञा से ज्ञानी जी (कबीर साहब) जीव कल्याणार्थ धरा पर अवतरित हुए। सतयुग, त्रेता, द्वापर तथा कलियुग में उनका नाम क्रमशः सत्सुकृत, मनीन्द्र, करुणामय तथा कबीर था।

सतयुग में सत्सुकृत के रूप में उन्होंने मात्र बारह लोगों को नाम–दान कर उनकी चेतना को जगाकर उन्हें सतलोक पहुँचा दिया। इनमें प्रथम धोंधल बादशाह था। उन्होंने मथुरा की वृद्धा भक्त खेमसरी और उसके परिवार के अन्य सदस्यों को भी नामदान किया। खेमसरी को उन्होंने सतलोक के दर्शन कराये तथा पलभर के लिये उसकी चेतना परमात्मा में मग्न हो गई।

त्रेतायुग में ज्ञानी जी का नाम मुनीन्द्र था। इस युग में इन्होंने लंका में विचित्र नामक भक्त तथा रावण की पत्नी मन्दोदरी को नामदान कर उनको शब्द श्रवण कराया।

द्वापर युग में तृतीय बार परम पुरुष की आज्ञानुसार पुनः ज्ञानी जी करुणामय के नाम से धरा पर अवतरित हुए। इस युग में इन्होंने गढ़ गिरनाल (अवध) के राजा चन्द्र विजय की रानी इन्द्रमती को नामदान किया तथा वे रानी की आत्मा को मानसरोवर तथा सतलोक तक ले गये तदनन्तर उन्होंने उसको कबीर सागर में स्नान कराके अमृत चखाया। रानी की प्रार्थना पर वे राजा चन्द्र विजय को भी सतलोक ले गये।

भक्त सुपच सुदर्शन की जीवन अवधि पूर्ण होने पर करुणामय जी उन्हें सतलोक ले गये तथा वह भक्त सुपच षोडश भानु कान्ति रूप में लय हो गया।

संत कबीर साहब **'द्वापर गत कलियुग परवेशा'** कहकर बताते हैं कि द्वापर युग बीत जाने पर पुनः वे परम पुरुष की आज्ञानुसार जीवों को उपदेश देने के लिए चल दिये। इस युग में इन्होंने जगन्नाथ पुरी की स्थापना तथा चार गुरुओं की स्थापना आदि कार्य किये। ये चार गुरु है चतुर्भुज जी, बंकेजी, सहतेजी और चौथे धर्मदास। संत कबीर साहब धर्मदास को नामदान करते हुए कहते है कि तुम जम्बूद्वीप के जीवों के भव–बन्धनों को काटकर उन्हें मुक्ति प्रदान करने वाले हो। कबीर साहब ने जम्बूद्वीप को परमात्मा का द्वीप कहा। परम शक्ति ने जीव कल्याणार्थ समय–समय पर अपने विविध अवतारों से इस द्वीप को पवित्र किया है। ऐसे जम्बूद्वीप को **चेतना द्वीप** कहा जाय तो अत्युक्ति नहीं।

इस शोध पुस्तक के पंचम अध्याय प्रज्ञात्मक चेतना के अन्तर्गत सर्वप्रथम सद्गुरु महिमा एवं गुरु चतुष्टय का कथन है। कबीर साहब ने गुरु के बिना ज्ञानप्राप्ति को कथमपि सम्भव नहीं माना। सद्गुरु ही भव–बन्धन काट सकते हैं तथा कालविजयी कर जीव चेतना को जगाते हुए उसे अनामी लोक तक ले जा सकते है। गुरु को पूर्णतः समर्पित तथा उनकी प्रत्येक रजा में राजी गुरुमुख शिष्य शब्द को सदैव अपने हृदय में धारण करते हैं। गुरु चन्द्रमा के समान है और शिष्य चकोरवत् जो हर पल गुरु के तेज को ही निरखता रहता है। व्यास पुत्र शुकदेव और नारद को

भी गुरु धारण करना पड़ा था। परमचेतना के ज्ञान एवं नामदान के लिये गुरु चतुष्टय के रूप में चतुर्भुज जी, बंकेजी, सहितेजी और धर्मदास का कथन अनुराग सागर में किया गया है।

सत्तपुरुष की आज्ञा से जब कबीर साहब जीव कल्याणार्थ धरा पर अवतरित हो रहे थे तब काल ने उनसे कहा कि वह उन्हीं की तरह द्वादश पंथ चलाकर जीवों को भ्रमित करेगा। इन द्वादश पंथों – जैसे मृत्यु अन्धा दूत का पंथ, तिमिर दूत का पंथ आदि का सामान्य कथन करने के पश्चात् चेतना प्रसारक व्यालीस वंशों का कथन इस पुस्तक में है। धर्मदास जी सत्सुकृत के अंश हैं। उनके पुत्र चूड़ामणि और उनके अंश रूप ब्यालीस वंश जीव चेतना के लिए जग में आये। जो व्यक्ति परमात्मा के भेजे हुए वंश से नामदान लेता है वह निर्भय होकर सीधे सतपुरुष के दरबार में जाता है। क्योंकि वह वंश मात्र वंश न होकर चेतना का वंश या चेतना का भण्डार होता है।

नादवंश, नादचेतना एवं बिन्दपुत्र शीर्षक में कहा गया कि नादी और बिन्दी पुत्रों के वंश धर्मदास से ही चलेंगे। नादी पुत्र दयाल चेतना में लय करायेगा तथा बिन्दीपुत्र नारायण काल के दायरे में ले जायेगा। जिन जीवों ने परमात्मा के भेजे हुए वंश या बचन वंश को पहचान लिया है, वे ही नाद चेतना से आनन्दित हो सकते है।

कबीर साहब नामदान से पूर्व चौका एवं आरती कराते थे। अनुराग सागर में भौतिक और अन्तः (नेत्र) दोनों प्रकार की आरतियों का कथन है। कबीर साहब का नाम से अभिप्राय सत्तनाम से है। सत्यनाम या सतनाम का जाप करने से काल उसके निकट नहीं आ सकता। यह नाम वर्णात्मक एवं धुन्यात्मक रूप में दो प्रकार का होता है। वर्णनात्मक अक्षर तथा धुन्यात्मक निःअक्षर है। जो जीव सद्गुरु से नामदान ले लेता है, वह इस महत्त्वपूर्ण डोर को पकड़कर सतलोक जा सकता है।

परमशक्ति के दो स्वरूप कहे गये – शब्द स्वरूप एवं प्रकाश स्वरूप। अनहद शब्द स्वरूप का ज्ञान गुरु प्रदर्शित मार्ग पर चलकर अभ्यास करने से ही हो सकता है। यह शब्दधुन बिना रसना (जिह्वा या जुबान) के ऊपर से हमारे अन्दर आ रही है। गुरु मुख शिष्य शब्द की कमाई से दिन–रात इस मधुर नामरस का पान करते हैं। अनुरागसागर में सतलोकवर्णन में, सत्तपुरुष के प्रकाशस्वरूप का भव्य वर्णन किया

गया है। सतनाम के स्मरण अथवा सुमिरन से पुरुष का प्रकाशस्वरूप अन्तःकरण में भासित होता है।

तीन लोकों से परे अर्थात काल की सीमा से परे चौथे लोक सतलोक का अत्यन्त विस्मयकारी वर्णन अनुराग सागर में किया गया। यह आदि पुरुष का देश है। यहाँ यमराज (निरंजन) का प्रवेश नहीं है। यह अत्यन्त सुन्दर लोक है तथा सतनाम द्वारा इस लोक से तारतम्य स्थापित किया जा सकता है। सत्य पुरुष का एक रोम करोड़ों सूर्य और चन्द्रमा के प्रकाश के बराबर है। उनके सम्पूर्ण शरीर के तेज और कान्ति का वर्णन नहीं किया जा सकता।

परम शक्ति से सर्वप्रथम शब्द प्रकट हुआ तदनन्तर विविध लोकों की रचना हुई पुहुप या पुष्प द्वीप में जब पुरुष चार कली वाले सिंहासन पर विराजमान हुए और अपनी कला धारण की तो वहाँ सर्वत्र सुगन्ध ही सुगन्ध हो गयी। यह सतलोक अनहद शब्द, परम प्रकाश एवं सुगन्ध का भण्डार है। यहाँ अंकूरी हंस जीव हर पल रसमग्न एवं आनन्दविलास में डूबे रहते हैं। इस लोक में प्रकाश ही प्रकाश है। यहाँ कभी रात्रि नहीं होती। हंस जीव जब त्रिलोक के काल–जाल से निकलकर सतलोक में प्रवेश करता है तो अन्य हंसात्माऐं उसके स्वागत में मंगल गान करती है, आरती करती हैं। जब रानी इन्द्रमती सद्गुरु कबीर (करुणामय) जी की कृपा से सतलोक पहुँचती है तो परमात्मा जो सूक्ष्म रूप में पुहुप रूप में थे, दर्शन देते हैं और अमृत फल भी देते है।

अनुराग सागर में कबीर साहब ने ध्यान के सहजमार्ग का कथन किया है जिसमें सुमिरन के समय जिह्वा से नाम का सुमिरन करते हैं। शनैः शनैः स्थिति यह होती है कि जिह्वा चुप या शान्त हो जाती है और इस जिह्वा के बिना ही सुमिरन होता है। ध्यान के विषय में कबीर साहब का यह भी कथन है कि जीव को जबतक निर्गुण अथवा रूप, रंग, रेखा रहित परम शक्ति का ध्यान नहीं होता तब तक वह भटकता रहता है। एक क्षण के लिये भी जब हमारा ध्यान या हमारी चेतना उस विदेह रूप में लय कर जाती है तो उस सुख का वर्णन नहीं किया जा सकता। यही स्थिति ध्यान की उत्कृष्ट अवस्था है जिसमें जीव चेतना निज चेतन–भण्डार में लय कर जावे। यह लय सद्गुरु की कृपा से ही सम्भव है। वस्तुतः अनुरागी अधिकारी भक्त की चेतना का

परम चैतन्य देश सतलोक जो निज चेतना का भण्डार है, में लय करना ही इस अनुराग सागर ग्रन्थ का सन्देश एवं उद्देश्य है।